मूल्य 1 रूपया

कृषक समाचार

भारत कृषक समाज का मासिक मुख पत्र

कृषक समाचार की 32,000 प्रतियां सन् 1960 से हर महीने छापकर सदस्यों को भेजी जाती हैं

वर्ष 64 | फरवरी, 2019 | अंक 2 | कुल पृष्ठ 8

सभापति का पत्र :

यह जानना रूचिकर है कि कृषि ऋण माफ करने की मांग के लिऐ कई प्रकार के कारण और औचित्य दिऐ जा रहे हैं, यह इसलिऐ है क्योंकि कृषि संकट पिछले कई वर्षों से इस कठिनाई का सामना कर रहा है। लेकिन इसके स्थाई समाधान के लिऐ किसी भी प्रकार का इमानदारी से न तो प्रयास किया जा रहा है और न ही इसके वास्तविक कारणों का पताया लगाया जा रहा है। गांव देहात में ऋण माफी की मांग का कारण यह भी है कि सरकारें बड़े– बड़े उद्योगपतियों का करोडों रूपया माफ कर देती है और उन्हें देश से जाने भी देती है, इस प्रकार के कार्य कुछ गिने चुने उद्योगपतियों को लाभ पहुंचाने के लिऐ किऐ जाते हैं। ऐसे में कृषि ऋण को माफ करने के लिऐ किसी को कैसे आपत्ति हो सकती है।

वार्तालाप के लिऐ यह एक अच्छा विषय हो सकता है लेकिन कृषि संकट के समाधान के लिऐ इससे कोई सहायता नहीं मिलेगी। दूसरी तरफ सरकार प्रतिमाओं के निर्माण पर करोडों रूपया खर्च करती है, अपनी उपलब्धियों पर भी पानी की तरह पैसा बहाया जा रहा है, इसका अर्थ है कि देश में पैसे की कोई कमी नहीं है। वास्तव में यदि सरकार किसान ऋण माफ कर देती है तो इन संसाधनों का उपयोग देश के अच्छे कार्यों के लिऐ हो सकता है, न की सरकार केवल कुछ उद्योगपतियों के ऋणों को माफ करे और बड़ी संख्या में नौकरशाहों को भी वेतन दिया जा रहा है।

किसान और गैर–किसान की आय की खाई में वृद्धि होती जा रही है, क्योंकि सरकारी कार्यालय का मामूली बाबू भी अच्छा जीवनस्तर बिताता है और सातवें वेतन आयोग के लागू होने के बाद तो यह अंतर और बड़ चुका है। वेतनों में संशोधन के परिणाम स्वरूप देश पर 1 लाख करोड़ से अधिक रूपये वार्षिक का भार पड़ा है और औसतन प्रत्येक सरकारी कर्मचारी को 1 लाख रूपये वार्षिक का लाभ मिला है। दूसरी तरफ किसानों की औसत वार्षिक आय केवल रू. 75,000/– ही बनती है। इस कारण यह अंतर बहुत ज़्यादा है। यह मजाक नहीं तो और

क्या है कि बड़े–बड़े विद्यवान और अर्थशास्त्री जो कृषि ऋण माफ करने की आलोचना करते हैं, वही लोग सातवें वेतन आयोग को अर्थव्यवस्था में सुधार के लिए उचित ठहराते हैं। यह कैसे हो सकता है कि कुछ लोगों को आर्थिक लाभ देना अन्य लोगों के लिऐ व्यर्थ सिद्ध होगा। यदि सातवां वेतन आयोग लागू नहीं किया जाता तो देश के कृषि क्षेत्र के लिए इतना राजस्व उपलब्ध हो जाता जिससे कृषि संबंधी सभी समस्याओं का स्थाई समाधान हो सकता था। किंतु किसानों के ऋण माफी के मुद्दे पर विचार करने से पहले इस समस्या को समझना भी आवश्यक है। किसानों के ऋण माफ करते समय कई प्रकार की सावधानियां बरतने की आवश्यकता है क्योंकि ऋण माफी का लाभ अधिकतम बिचौलिऐ उठा लेते हैं। जैसे ही उन्हें इसकी सूचना मिलती है वे अत्यधिक सक्रिय हो जाते हैं और यह देखा गया है कि इसका लाभ वास्तविक किसानों तक बहुत कम पहुंच पाता है।

यह भी प्रश्न उठता है कि ऋण माफी के लिऐ कुल कितना रूपया चाहिऐ, इसका सही आंकलन तब ही हो सकता है जब सरकार के प्रस्तावों के मसौदे का अध्ययन कर लिया जाऐ। प्राप्त रिर्पोटों के अनुसार पंजाब की तरह छोटे और मझौले किसानों के 2 लाख रूपये के ऋण को माफ करने की तरह ही मध्य–प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ में भी ऐसा किया जाऐगा। यदि श्री नरेंद्र मोदी, श्री राहुल गांधी की तर्ज पर देशभर के किसानों का ऋण माफ करें तो लगभग 3.5 लाख करोड़ रूपये का भार सरकार को उठाना होगा। इसके लिऐ सावधानी के रूप में ग्राम सभा की बैठकें आयोजित करके ऐसा करना चाहिए ताकि केवल छोटे किसानों को ही वास्तविक लाभ पहुंच सके, न कि बड़े–बड़े किसानों और जमीनदारों को।

यह बड़े खेद का विषय है कि कृषि ऋण माफी को सदा राजनैतिक मुद्दा बना दिया जाता है, जबकि इसके वास्तविक समाधान के लिऐ ईमानदारी से प्रयास नहीं किऐ जाते। इसका वास्तविक कारण यह है कि भारत के किसानों के संकट का समाधान दिल्ली में बड़े–बड़े लोग एअर–कंडीशन कमरों में बैठकर करते हैं। इनमें से बहुत से तो ऐसे हैं जिन्हें कृषि अर्थव्यवस्था का कोई ज्ञान नहीं है और कुछ कृषि क्षेत्र की सहायता करने के विरूद्ध हैं। यही कारण है कि सरकारी नीतियां असफल हो जाती हैं और ऐसे नीति निर्माताओं का लक्ष्य केवल फसलों का उत्पादन बढ़ाने की ओर ही होता है, न कि किसानों के वास्तविक संकट के समाधान पर। इसका खामियाजा केवल किसानों को ही भुगतना पड़ता है।

बार–बार यही कहा जाता है कि किसानों की मांग उचित नहीं है और वे अत्यधिक मांगें करते हैं, क्योंकि वे परिश्रम नहीं करना चाहते। यह दोष किसके सिर होना चाहिऐ। विक्टर हयुजो का कहना है कि यदि आप अनुचित लाभ लेना चाहते हैं तो इसका दोष आपको नहीं है, दोषी वो है जिसने ऐसे हालात पैदा किऐ हैं। हमारे देश के लोकतंत्र के संदर्भ में यह देखा गया है कि किसानों की समस्या का समाधान केवल तब ही हो सकता है जब किसानों को एक सुनिश्चित आय प्रदान की जाऐ और कृषि क्षेत्र से बाहर भी उन्हें रोजगार मिले, इसके लिऐ सरकार को कुछ ऐसे रोजगार उपलब्ध कराने चाहिऐं जिससे किसानों को सरकारी ऋण ना लेना पड़े। इस मुद्दे का केवल राजनैतिक लाभ उठाकर इसका स्थाई समाधान नहीं किया जा सकता।

ऐसा करने पर भारतीय किसान हमेशा इसी दुविधा में रहेगा कि वह क्या करे, किससे आशा करे। लगभग 4 वर्ष पहले सरकार ने न्यूनतम समर्थन मूल्य और सी2+50 प्रतिशत के फॉर्मूले पर विचार किया था और यह भी कहा था कि 6 वर्ष में किसानों की आय दोगुनी हो जाऐगी। लेकिन इस विषय को भूलकर ऋण माफी और किसानों के खाते में कैश ट्रांसफर जैसे विषय आरंभ हो गऐ। अब तेलांगना राज्य की तरह समाधानों पर विचार किया जा रहा है। लेकिन तेलांगना राज्य में चुनाव हो चुका है और यह संदेह है कि इस राज्य में रायतूबंधु योजना का प्रमुखता से आरंभ किया था और यह योजना अप्रैल 2018 में आरंभ की गई थी। लेकिन इसे चालू रखना अति कठिन होगा। तेलांगना के सभी कृषि भूमि वासियों को तेलांगना सरकार रू. 4,000/– प्रति एकड़ की दर से वित्तीय सहायता दे रही थी।

इस राज्य ने इस योजना को लागू करने के लिऐ गहन प्रयास के किऐ और पूरे राज्य के लगभग 10,500 गांवों की भूमि का रिकॉर्ड सुधारा ताकि इस योजना को लागू करने में लापरवाही न बरती जाऐ। वर्ष 2018–19 में राज्य ने इस योजना के लिऐ रू. 12,000/– करोड़ दिया। यदि तेलांगना जैसी योजना को पूरे देश के किसानों के लिऐ लागू किया जाऐ तो रू. 8,000/– प्रति एकड़ की दर से, चाहे उनके पास भूमि का आकार कैसा भी हो, उन्हें कैश देने से लगभग 3.20 लाख करोड़ रूपये का खर्चा बैठेगा। हालांकि यह राशि बहुत बड़ी दिखाई देगी किंतु यह पूरे देश में सातवां वेतन आयोग लागू करने की राशि से बहुत कम है। किसानों को इसका लाभ नहीं मिल पाता और आज उनकी ऐसी स्थिति होने का कारण यह है कि राजनैतिक दलों में कोई किसान नेता नहीं है।

कुछ राज्यों के किसान फसल ऋण माफ करने का वादा पूरा करने के लिऐ राहुल गांधी का प्रशंसा करते हैं, इसका राजनैतिक लाभ तो लिया जा चुका है, लेकिन अब कांग्रेस को आवश्यकता है कि वह ऋण माफी के अतिरिक्त कुछ सकारात्मक उपाय भी करे। किसानों के संकट को दूर करने के लिऐ कई उपाय किऐ जा सकते हैं जिन पर गंभीरता से विचार करना होगा। कुछ कठिनाईयां जैसे अंतरराष्ट्रीय बाजार में जिंसों के गिरते हुऐ भाव, वैश्विक मंदी, सूखा पड़ना, नोटबंदी आदि जैसी कठिनाईयां और प्रभावहीन नीतियां, राजनैतिक इच्छा की कमी आदि जैसी कठिनाईयों से निपटना होगा। जब तक किसानों को वास्तव में यह महसूस नहीं हो जाता कि उनकी स्थिति में सुधार के लिऐ सरकार गंभीर है और सुशासन के माध्यम से उन्हें राहत मिलेगी, तब तक यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि जो सफलता हाल ही के राज्य चुनावों में मिली है वैसी ही सफलता इस वर्ष होने वाले राष्ट्रीय चुनावों में मिल पाऐगी।

– अजय वीर जाखड़
अध्यक्ष, भारत कृषक समाज
@ajayvirjakhar

o-o-o-o-o-o-o-o-o-o-o-o-o

मोदी राज में किसान : डबल आमद या डबल आफत?

* श्री योगेन्द्र यादव

शेष भाग

बीजेपी के मेनिफेस्टो में किसानों से किए कुछ वादे तो सामान्य किस्म के थे, जो ज़्यादातर मेनिफेस्टो में होते हैं। मसलन :

- कृषि और ग्रामीण विकास में सरकारी निवेश बढ़ाया जाएगा।
- सस्ते कृषि उपकरण और कर्ज उपलब्ध कराए जाएंगे।
- 60 साल से ज़्यादा उम्र के छोटे और सीमांत किसानों और मजदूरों के लिए कल्याणकारी योजना बनाई जाएगी।
- कम पानी से सिंचाई करने वाली तकनीक को बढ़ावा दिया जाएगा।
- प्राकृतिक आपदाओं से किसानों को राहत दिलाने के लिए कृषि बीमा योजना लागू की जाएगी।
- ग्रामीण इलाकों में कर्ज की सीमा (बैंक ऋण की उपलब्धता) बढ़ाई जाएगी।
- बागवानी, फूलों की खेती, मछली पालन, मधुमक्खी पालन और मुर्गी पालन को बढ़ावा दिया जाएगा। रोजगार के अवसर बढ़ाए जाएंगे।

इनके अलावा बीजेपी के घोषणापत्र में निम्नलिखित कुछ नई और ठोस बातें भी कही गई थीं :

- देश की भू–संपदा को बचाने के लिए एक नेशनल लैंड यूज पॉलिसी (राष्ट्रीय भूमि उपयोग नीति) बनेगी, ताकि केवल गैर–कृषि भूमि का वैज्ञानिक तरीके से अधिग्रहण होगा।
- इस नीति को लागू करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर नेशनल लैंड यूज अथॉरिटी और राज्य स्तर पर लैंड यूज अथॉरिटी बनाई जाएगी।
- कृषि उपज मंडी समिति (एपीएमसी) के कानून में सुधार किया जाएगा।
- प्राकृतिक खेती और खाद को प्रोत्साहन देने के लिए ऑर्गेनिक फार्मिंग एंड फर्टिलाइजर कॉरपोरेशन बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की जाएगी।
- एग्रो फूड प्रोसेसिंग क्लस्टर की स्थापना कर कृषि उत्पाद के सीधे निर्यात की व्यवस्था की जाएगी।
- मिट्टी का परीक्षण करने की प्रणाली का विकास किया जाएगा।
- मोबाइल मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं चलाई जाएंगी।
- ज़्यादा उपज देने वाले बीज मुहैया कराए जाएंगे।
- हर जिले में बीज़ कल्चर लैब बनाई जाएंगी।

- मछली पालन को बढ़ावा दिया जाएगा। मछुआरों के कल्याण के कदम उठाए जाएंगे।
- जीएम खाद्य पदार्थों को बिना वैज्ञानिक जांच–पड़ताल के अनुमति नहीं दी जाएगी।

2.2 अनेक वादे जो सरकार भूल गई

सबसे पहले हम इन कुछ ठोस वादों की जांच कर लें।

- राष्ट्रीय लैंड यूज अथॉरिटी बनाने की दिशा में एक कदम भी नहीं उठाया गया। आज भी ग्रामीण विकास मंत्रालय के भू–संसाधन विभाग की वेबसाइट पर 2013 का एक पुराना ड्राफ्ट पड़ा हुआ है। जाहिर है, जब नीति ही नहीं बनी तो अथॉरिटी कैसे बनती। यह मामला सिर्फ एक सरकारी दस्तावेज और संस्था का नहीं था। यह कोई संयोगवश हुई भूल नहीं थी। यह महत्वपूर्ण चुनावी वादा कृषियोग्य भूमि के अवांछित अधिग्रहण से ताल्लुक रखता था। अगर भूमि के उपयोग के बारे में एक राष्ट्रीय नीति होती और उसे लागू करने वाली संस्था (अथॉरिटी) होती तो विकास के नाम पर किसान के विनाश की योजनाओं से उसे बचाया जा सकता था। लेकिन इस सरकार की ऐसी कोई मंशा नहीं थी। इस सरकार ने उपजाऊ जमीन का अधिग्रहण पहले से भी ज़्यादा जोर–शोर से किया।
- कृषि उपज मंडी समिति (एपीएमसी) कानून के किसान विरोधी हिस्सों में आज भी कोई प्रभावी बदलाव नहीं हुआ है। खानापूर्ति के लिए केंद्र सरकार ने 2017 में एक मॉडल कानून 'कृषि उत्पाद एवं पशुधन विपणन (संवर्द्धन एवं संयोजन) विधेयक' प्रकाशित कर दिया। लेकिन इस विषय में केंद्र सरकार को कानून बनाने का अधिकार नहीं है। यह विधेयक तभी कानून बनेगा अगर राज्य सरकारें इसे स्वीकार करें। बीजेपी दिन–रात 20 राज्यों में अपनी सरकार होने का ढिंढोरा पीटती है। प्रधानमंत्री आए दिन कहते हैं कि केंद्र और राज्य सरकार एक ही पार्टी की हो तो विकास होगा। लेकिन अब तक बीजेपी सरकारों सहित किसी भी राज्य सरकार ने इस मॉडल कानून को लागू नहीं किया है। वैसे केंद्र सरकार द्वारा बनाए मॉडल कानून में भी किसान के पक्ष में यह न्यूनतम प्रावधान तक नहीं है कि मंडी में सरकार द्वारा तय न्यूनतम समर्थन मूल्य से कम पर कोई भी उपज न बेची जाए।
- बुजुर्ग किसानों और खेतीहर मजदूरों को बुढ़ापे में सहारा देने के लिए कोई प्रभावी कल्याण योजना नहीं बनाई गई है। बुढ़ापा पेंशन की एक पुरानी योजना चली आ रही थी। इस योजना में बीपीएल कार्ड वाले (गरीबी रेखा से नीचे) परिवारों में बुजुर्गों को पेंशन में केंद्र सरकार हर महीने 200 रूपये का अंशदान करती है। मोदी सरकार ने 2006 से चली आ रही इस नाममात्र की राशि में बढ़ोत्तरी भी नहीं की। किसानों और असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की पेंशन की खानापूर्ति के लिए सरकार ने

'अटल पेंशन योजना' की घोषणा तो कर दी, लेकिन यह कोई नई योजना नहीं है। इससे पहले यूपीए के राज में ऐसी ही एक कागजी 'स्वावलंबन योजना' चला करती थी। इस सरकार ने बस उसका नाम बदल दिया और उसमें कुछ छिटपुट संशोधन कर दिए। सही कहें तो इसे पेंशन योजना भी नहीं कहना चाहिए। दरअसल, यह बचत और बीमा या भविष्य निधि जैसी एक योजना है। कोई भी व्यक्ति अगर 40 साल तक अगर हर महीने 100 रूपया जमा करेगा तो उसे 60 साल पर होने के बाद हजार रूपये महीने के हिसाब से 'पेंशन' मिलेगी। यह तो किसान को उसकी ही बचत में मामूली–सा सरकारी अंशदान डालकर वापस लौटाने की योजना है। किसान संगठनों और असंगठित क्षेत्र के मजदूर संगठनों की मांग यह है कि आठ साल की उम्र पार होने के बाद हर किसान–मजदूर को बिना किसी शर्त के 3000 रूपये प्रतिमाह पेंशन दी जाए। यह राशि न्यूनतम मजदूरी के आधे के हिसाब से तय की गई है। लेकिन मोदी सरकार ने इस मांग पर विचार करना भी उचित नहीं समझा। जब देश–भर से हजारों किसान–मजदूर 'पेंशन परिषद' के बुलावे पर 1–2 अक्टूबर 2018 को दिल्ली पहुंचे तो मोदी सरकार के किसी प्रतिनिधि ने उनसे बात तक नहीं की।

S आर्गेनिक फार्मिंग एंड फर्टिलाइजर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया का नामोनिशान भी नहीं है। आज भी प्राकृतिक खेती के नाम पर चल रहा पुराना सरकारी ढांचा बदस्तूर जारी है। बेशक, इस सरकार ने प्राकृतिक खेती को प्रोत्साहन देने के लिए एक सही शुरूआत की थी। 'परंपरागत कृषि विकास योजना' के नाम से प्राकृतिक खेती के लिए बजट में पहले से अधिक फंड आवंटित किए गए थे। लेकिन जहां इस मद से कम से कम 1,000 करोड़ रूपये की जरूरत थी, वहां सरकार ने हर साल बजट में लगभग 350 करोड़ की ही घोषणा की। उससे भी ज़्यादा निराशा की बात यह थी कि वास्तविक खर्चा बजट की घोषणा से बहुत कम हुआ। 2015–16 में 189 करोड़ खर्च हुआ, 2016–17 में सिर्फ 71 करोड़ तो 2017–18 में उससे भी कम। इसमें कोई शक नहीं कि पिछले चार साल में प्राकृतिक खेती का रकबा तेजी से बढ़ा है, लेकिन यहां भी वास्तविक प्रगति सरकारी दावों से बहुत कम है। 'मैनेज' संस्था द्वारा किए मूल्यांकन के अनुसार, सरकारी दावे के 62 फीसदी क्लस्टर ही बन पाए हैं। सच यह है कि प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने के लिए जिस व्यवस्थित और संस्थागत प्रयास की जरूरत थी, वह आज भी दिखाई नहीं दे रहा है।

अन्य कई वादे जैसे मृदा परीक्षण के आधार पर फसलों का चयन, बीज परीक्षण लैब, कृषि में जैव विविधता के संरक्षण के लिए बीजशाला और नवाचारशाला जैसे प्रस्ताव आज भी धरे के धरे हैं। मृदा परीक्षण के कार्ड बने हैं, जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे। लेकिन उनका फसल चयन और जैव विविधता से कोई लेना–देना नहीं है।

2.3 लागत के डेढ़ गुना दाम के वादे से सरकार मुकर गई

मोदी सरकार का मूल्यांकन घोषणापत्र के छोटे–मोटे वादों के बजाय सबसे बड़े वादे के आधार पर करना न्यायोचित होगा। 2014 के चुनाव में बीजेपी का प्रमुख वादा यह था कि किसान को घाटे की खेती के कुचक्र से बचाया जाएगा और उसे खेती की पूरी लागत पर कम से कम 50 प्रतिशत मुनाफा सुनिश्चित करवाया जाएगा। लागत से डेढ़ गुना दाम का यह फार्मूला अचानक बीजेपी के मन में नहीं आ गया था। इसके पीछे स्वामीनाथन आयोग की सिफारिश थी।

सन 2004 में तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने कृषि वैज्ञानिक एम.एस. स्वामीनाथन की अध्यक्षता में राष्ट्रीय कृषि आयोग बनाया था। इस आयोग ने सन 2006 में अपनी अंतिम रिपोर्ट सरकार को सौंप दी थी। इस रिपोर्ट की एक प्रमुख सिफारिश यह थी कि अगर किसानी को घाटे का धंधा होने से बचाना है तो किसान को उसकी संपूर्ण लागत का डेढ़ गुना दाम सुनिश्चित करवाना होगा। यह सिफारिश देख कर तत्कालीन कांग्रेस सरकार को सांप सूंघ गया और उसने आठ साल तक इस सवाल पर चुप्पी साधे रखी। किसान आंदोलन और बीजेपी के नेता कांग्रेस की इस चुप्पी के लिए उसे किसान विरोधी ठहराते थे। बीजेपी के किसान संगठन भी स्वामीनाथन आयोग की इस सिफारिश को लागू करने की रट लगाए रखते थे। अपनी चुनावी सभाओं में श्री नरेंद्र मोदी ने बार–बार किसानों को भरोसा दिलाया कि वे किसानों की इस ऐतिहासिक मांग और जरूरत को पूरा करेंगे।

यहां एक मिनट रूक कर यह समझना जरूरी है कि वह लागत क्या है जिसके डेढ़ गुना दाम की मांग की जा रही है। फसल में किसान की क्या लागत है, इसे मापने के तीन अलग–अलग पैमाने हो सकते हैं। पहला बिलकुल न्यूनतम पैमाना है, जिसमें सिर्फ वही लागत शामिल होती है, जो किसान नक़द अपनी जेब से खर्च करता है। बीज, खाद, कीटनाशक, पानी, बिजली और गुड़ाई, बुवाई, कटाई पर लगी मजदूरी जैसे तमाम खर्च को शामिल कर लिया जाए तो उससे न्यूनतम लागत निकलती है। सरकारी भाषा में इसे ए–2 लागत कहते हैं। इस न्यूनतम लागत में किसान और उसके परिवार की अपनी मेहनत–मजदूरी शामिल नहीं है। अगर इस मद में अनुमान से कुछ राशि जोड़ दें तो इसे आंशिक लागत कह सकते हैं। सरकारी भाषा में इसे ए–2+एफएल लागत कहते हैं।

लेकिन लागत निकालने के इन तरीकों में सबसे महत्वपूर्ण मद शामिल नहीं होती, यानी किसान की अपनी जमीन का किराया और उसके अपने पूंजी निवेश का ब्याज। जब कोई दुकानदार या उद्योगपति अपनी लागत का हिसाब करता है, तो अपनी दुकान या फैक्टरी का किराया जोड़ता है, चाहे उसको किराया देना न पड़ता हो।

जाहिर है, अगर कोई किसान अपनी जमीन ठेके पर नहीं देता है तो जो पैसा उसे किराये में मिल सकता था, वह उसकी लागत है। इसी तरह उसने ट्रैक्टर, पम्पसेट, ट्यूबवेल में जो पूंजी

RNI No. 831/1957
पोस्टल रजि० DL (S)-01/3092/2018-20
पहले भुगतान किये बिना पोस्ट करने का लाइसेंस नं० U(C)-92/2018-20

प्रकाशन की तिथि : 1 फरवरी, 2019
नई दिल्ली पी.एस.ओ, नई दिल्ली–1,
तारीख 4 एवं 5, फरवरी 2019

लगाई है, उसका ब्याज और उसका सालाना मूल्य–ह्रास (डेप्रीसिएशन) भी उसकी लागत है। इन दोनों को जोड़ने पर किसान की फसल की संपूर्ण लागत निकलती है। सरकारी भाषा में इसे सी–2 लागत कहते हैं। स्वामीनाथन आयोग ने इस संपूर्ण या सी–2 लागत पर डेढ़ गुना दाम की सिफारिश की थी। किसान आंदोलन भी 2006 से लगातार सी–2 लागत के कम से कम डेढ़ गुना दाम की मांग कर रहे हैं। बीजेपी के नेता भी यही मांग करते थे। इसलिए बीजेपी के मेनिफेस्टो और श्री नरेंद्र मोदी के वादे को इसी रोशनी में देखा जाना चाहिए।

मोदी सरकार इस वादे को पूरा करने के बजाय ठीक उलटा काम करने में लगी रही है। सत्ता में आते ही खरीफ की फसल की बिक्री के समय मोदी सरकार ने एमएसपी (न्यूनतम समर्थन मूल्य) घटाने की भरसक कोशिश की। उस समय कई राज्य सरकारें केंद्र सरकार द्वारा घोषित एमएसपी पर किसानों को अपने बजट से कुछ बोनस भी देती थी। मोदी सरकार ने आते ही फरमान जारी किया कि राज्य सरकारें किसानों को बोनस देना बंद करें, नहीं तो केंद्र सरकार उन राज्यों से धान की खरीद नहीं करेगी। कई सरकारों को बोनस बंद करना पड़ा।

फरवरी 2015 में मोदी सरकार ने एक कदम और आगे बढ़कर साफ कह दिया कि वह लागत का डेढ़ गुना एमएसपी नहीं देगी। चुनाव के तुरंत बाद एक किसान संगठन 'कन्सोर्शियम ऑफ इंडियन फार्मर्स एसोसिएशन' ने सुप्रीम कार्ट में याचिका दायर करके यह मांग की थी कि सरकार को स्वामीनाथन आयोग की सिफारिश के मुताबिक लागत का डेढ़ गुना दाम देने के लिए बाध्य किया जाए।

जब केंद्र सरकार से जवाब मांगा गया तो उसने कृषि मंत्रालय के संयुक्त सचिव की मार्फत एक हलफनामा दायर किया, जिसमें साफ–साफ लिखा था : 'न्यूनतम समर्थन मूल्य की सिफारिश कृषि लागत एवं मूल्य आयोग द्वारा वस्तुपरक कसौटियों के आधार पर और अनेक बिंदुओं पर गौर करने के बाद की जाती है। इसलिए इसे लागत का कम से कम 50 प्रतिशत तक बढ़ा देने से बाजार के विकश्त होने की संभावना है।'

(शेष भाग अगले अंक में प्रकाशित किया जाएगा)

---

* अध्यक्ष, स्वराज इंडिया

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

भारत कृषक समाज ए–1, निजामुद्दीन वेस्ट, नई दिल्ली– 110013, फोनः 011–24359509, 966767318, ई–मेलः ho@bks.org.in, वैबसाईटः www.farmersforum.in के लिए श्री उरविन्द्र सिंह भाटिया द्वारा सम्पादित, मुद्रित व प्रकाशित तथा एवरेस्ट प्रेस, ई 49/8 ओखला इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस –2, नई दिल्ली –110020 द्वारा मुद्रित।